International Journal of History 2024; 6(1): 75-80

INTERNATIONAL JOURNAL OF HISTORY

E-ISSN: 2706-9117
P-ISSN: 2706-9109
www.historyjournal.net
IJH 2024; 6(1): 75-80
Received: 03-12-2023
Accepted: 04-01-2024

रिनु कुमारी
शोधार्थी, स्नातकोत्तर, इतिहास विभाग, कोल्हान विश्वविद्यालय, चाईबासा, झारखंड, भारत

Corresponding Author:
रिनु कुमारी
शोधार्थी, स्नातकोत्तर, इतिहास विभाग, कोल्हान विश्वविद्यालय, चाईबासा, झारखंड, भारत

पश्चिमी सिंहभूम के हो आदिवासियों की कृषि अर्थव्यवस्था का ऐतिहासिक सर्वेक्षण

रिनु कुमारी

DOI: https://doi.org/10.22271/27069109.2024.v6.i1b.263

सारांश
प्रस्तुत आलेख झारखंड के पश्चिमी सिंहभूम जिले के हो आदिवासियों की कृषि अर्थव्यवस्था का ऐतिहासिक समीक्षात्मक अध्ययन है। इस आलेख को दो भागों में विभाजित किया गया है। प्रथम भाग में पूर्व ब्रिटिशकालीन और ब्रिटिशकालीन हो समाज की कृषि अर्थव्यवस्था पर आधारित क्रियाकलापों का अध्ययन है, कि किस प्रकार ब्रिटिश कब्जे के पूर्व हो समाज की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से वन्य संग्रह और अल्पविकसित खेती के उत्पादों पर आधारित थी। 1837 ई० में कोल्हान गर्वमेंट इस्टेट के रूप में ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ ही भूमि बन्दोबस्त और वन्य अधिनियम कानून के फलस्वरूप, हो कृषि अर्थव्यवस्था में बदलाव आए। अंग्रेजों द्वारा वन्य अधिनियमों के तहत झूम कृषि व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया और हो लोगों को स्थाई कृषि करने पर मजबूर किया गया, ताकि ब्रिटिश सरकार को स्थाई कर प्राप्त हो सके। इन प्रयासों से कृषि भूमि में विस्तार हुआ और साथ ही कृषि की स्थिति बेहतर हुई। किंतु कृषि क्षेत्र में सरकार के बढ़ते अत्यधिक दबाव के कारण, हो वैकल्पिक रोजगार ढूंढने लगे, अब हो लोगों को रोजगार के लिए ठेकेदारों के अधीन जंगल, खदान, ईट भट्टों, सड़क एवं रेलवे निर्माण आदि में मजदूरी करनी पड़ी। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति तो मजबूत होती है, किंतु अब वे कृषक से मजदूर बन गए। जिससे कृषि की यथा स्थिति में गिरावट आती है।
दूसरे भाग में, 19वीं सदी के उतराद्ध में कोल्हान में शिक्षा का आगमन एवं प्रसार होता है। स्वाधीनोत्तर कल तक आते–आते बड़ी संख्या में हो आदिवासी शिक्षित होने लगे। शिक्षित नौकरी पेशा वाले हो लोगों को समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाने लगा। शिक्षित हो लोग कृषि कार्य को छोड़ आजीविका के रूप में नौकरीपेशा को अपने लगे। जिससे हो आदिवासी कृषि अर्थव्यवस्था कमजोर पड़ने लगती है। कालांतर में, शिक्षित हो समाज ने पुनः कृषि के महत्व को समझा, जिससे शिक्षा प्राप्त हो आदिवासी कृषक, कृषि के क्षेत्र में आधुनिक तकनीकी बदलाव लाने लगे और अपने परंपरागत कृषि अर्थव्यवस्था को बचाने के लिए कार्य करने लगे।

कूटशब्द : कृषि अर्थव्यवस्था, हो आदिवासी समाज, कोल्हान गर्वमेंट इस्टेट, वन्य अधिनियम कानून, भूमि बन्दोबस्त, ।

प्रस्तावना
प्रस्तुत आलेख हो[1] आदिवासियों की कृषि अर्थव्यवस्था के अध्ययन पर आधारित है। हो भारत का एक प्रमुख आदिवासी समुदाय है। झारखंड का दक्षिणी क्षेत्र कोल्हान–पोड़ाहाट हो आदिवासी लोगों का निवास क्षेत्र है, जो वर्तमान समय में पश्चिमी सिंहभूम[2] जिले के नाम से जाना जाता है।

[1] हो, भारत के झारखण्ड राज्य के सिंहभूम जिले तथा पड़ोसी राज्य उड़ीसा के क्योंझर, मयूरभंज, जाजपुर जिलो में निवास करते हैं। हो लोगों को 'लड़ाका कोल' (Larka Koles) भी कहते है। 20 वीं सदी के अन्त में इनकी संख्या करीब 12 लाख थी। वर्तमान में, हो झारखण्ड की चौथी सबसे बड़ी जनजाति है। इसके पूर्व संथाल, उराव तथा मुंडा जनजाति के लोग आते है।

[2] पश्चिमी सिंहभूम जिला $21^{0}58'$ से $23^{0}36'$ उत्तरी अक्षांश और $85^{0}0'$ से $86^{0}54'$ देशांतर में फैला हुआ हैं। यह जिला समुद्र तल से 244 मीटर की ऊंचाई पर स्थित हैं और इसका क्षेत्रफल 5351.41 वर्ग किलोमीटर हैं। जिले के उत्तर में खूंटी जिला, पूर्व में सरायकेला–खरसावा जिला, दक्षिण में उड़ीसा राज्य का क्योंझर, मयूरभंज और सुन्दरगढ़ जिले तथा पश्चिमी में सिमडेगा जिला सीमाबद्व है तथा इसका मुख्यालय चाईबासा है।

इतिहास–लेखन की दृष्टि से हो आदिवासी लोगों के इतिहास को पुनःनिर्मित करने के लिए लिखित स्रोतों का अभाव है। पूर्व औपनिवेशिक काल में हमें कोई भी लिखित स्रोत प्राप्त नहीं होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि पूर्व ब्रिटिशकालीन हो समाज एक मौखिक समाज था जहां साक्षर परंपरा का पूर्ण रूप से अभाव था। हो लोगों द्वारा बोली जानी वाली "हो" भाषा भी लंबे समय तक एक मौखिक भाषा थी। हो भाषा लिखित नहीं होने के कारण हो लोगो द्वारा स्वयं का इतिहास नहीं लिखा जा सका। इस प्रकार, हो समुदाय की पूर्व–साक्षर परंपरा उनसे संबंधित इतिहास लेखन में बहुत मदद नहीं करती है। लेकिन इसका यह अर्थ कतई नहीं है कि पूर्व औपनिवेशिक काल में हो समुदाय का अपना कोई इतिहास नहीं है। प्रसिद्ध इतिहासकार अशोक कुमार सेन लिखते हैं कि "प्राक्–साक्षर आदिवासी समाज अपने लम्बे उपनिवेश पूर्व अतीत को लिपिबद्ध नहीं कर पाए, इसलिए एक गलत धारणा फैलायी गयी कि वे प्राक्–इतिहास के दौर के है। ब्रिटिश शासन के दौरान जब मानवजातीय और ऐतिहासिक विवरण लिखे जाने लगे, तब इस धारणा के कारण उनके इतिहास के पुनरूद्धार या इतिहास में उनकी भूमिका का सही मूल्यांकन नहीं किया जा सका।"[3] वस्तुतः सभी जनजातियां अपने पूर्वजों से प्राप्त ज्ञान को मौखिक रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाती जाती है। इसका ज्वलंत उदाहरण वर्तमान हो समाज भी है जो लोक–कथाओं, लोक–गीतों तथा विभिन्न नृत्य–शैलियों में अपने समृद्ध इतिहास को संजोये हुए है।

हो आदिवासी समाज के इतिहास के विषय में इतिहासकारों का मानना है कि प्रारंभ में लगभग दसवीं शताब्दी से पहले मुण्डा आदिवासी लोगों का एक समूह छोटानागपुर के क्षेत्रों से पलायन करते हुए कोल्हान क्षेत्र में आकर बस गए।[4] आगे चलकर इन्होंने स्वयं को हो कहकर संबोधित किया।[5] वे कभी मुंडा जनजाति का हिस्सा थे और वर्तमान रांची जिले में रहते थे। A.D. Tuckey[6] के अनुसार जब मुंडा और उरांवो ने बाहरी लोगों के आक्रमण से खुद को बचाने के लिए अपना पहला राजा चुना, तब हो जो स्वतंत्र रहना पसंद करते थे, मूल जनजाति को छोड़कार रांची के दक्षिण पूर्व में चले गए।[7] हो लोगों के होदिसुम का गठन[8] को देखा जाए तो उनके व्यवस्थित प्रवास के स्वरूप को समझा जा सकता है। हो लोगों के विषय में पहला लिखित विस्तृत साक्ष्य S.R.Tickell[9] प्रस्तुत करते है। वे लिखते हैं कि मुंडा सिंहभूम में एक नई मातृभूमि बनाने के लिए छोटानागपुर के पठारों को छोड़कर पहाड़ियों से दक्षिण की ओर संभवत दो मार्गों का अनुसरण कर आगे बढ़े। एक कोयल और कारों नदियों के साथ पश्चिमी मार्ग रहा होगा। जबकि दूसरा सरायकेला और खरसावाँ के माध्यम से यह पूर्वी मार्ग होगा। उन्होंने पहले सिंहभूम के उत्तरी भाग में प्राचीन वन क्षेत्रों का पर कब्जा कर लिया तथा इन पहाड़ी इलाकों को अपना निवास क्षेत्र बनाया।[10] कुछ समय उत्तरी सिंहभूम में रहने के बाद हो लोग राजनीतिक तनाव के कारण दक्षिण में कोल्हान क्षेत्र में आकर बस गए।[11]

स्थायी जीवन तथा कृषि अर्थव्यवस्था

हो लोग मूल रूप से कृषक थे उन्होंने प्रारंभिक अवस्था में झूम कृषि को अपनाया वे जंगलों को साफ कर खेती करते जब तक की भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती। उन्हें हर तीसरे वर्ष जंगल की सफाई कर नई कृषि भूमि या खेतों का निर्माण करना पड़ता है क्योंकि इन स्थानों की मिट्टी पहली बुवाई के लिए बहुत समृद्ध होती है, लेकिन खाद न मिलने से तीन या चार साल में मिट्टी की उर्वरता शक्ति समाप्त हो जाती है इसके फलस्वरुप कृषि को स्थानांतरित करना पड़ता था।[12] आरंभिक अवस्था में झूम खेती के रूप में अस्थायी कृषि थी, बाद में इन्होंने एक स्थान पर टिक कर अपनी जरूरतों के अनुसार फसलों को उगाना शुरू किया। इस प्रकार, कृषि स्थायी हो गई और गाँव बसने की प्रक्रिया सुदृढ़ हुई। कृषि हो लोगों की आजीविका का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत था। हो समाज में भूमि किसी एक व्यक्ति की न होकर पूरे परिवार की होती थी। जिन प्रमुख लोगों द्वारा जंगल को साफ कर गांव को प्रथम बसाया गया, उन्हें खूंटकट्टीदार[13] कहा गया तथा इन्हीं परिवारों के पुरुष प्रधान को मुंडा माना गया, जिसमें गांव की प्रमुख प्रशासनिक शक्ति विद्यमान रहती थी।

समय बीतने के साथ हो समाज की अर्थव्यवस्था अधिकाधिक कृषि केंद्रित होती गई। इसका अनुमान इस आधार पर लगाया जा सकता है कि हो लोगों के पर्व त्यौहार और अनुष्ठान कृषि पर आधारित हैं। मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने, प्रकृति और कथित अलौकिक आपदाओं से फसलों की रक्षा करने और धन्यवाद देने के लिए पूरा गांव और परिवार मिलकर बोंगा की पूजा करते हैं।[14]

---

[3] आशेक कुमार. सेन, विस्मृत आदिवासी इतिहास की खोजः हो इतिहास के कुछ आयाम, आई० डी० पब्लिशिंग, रांची, 2009, पृष्ठ 9.

[4] A.D. Tuckey, Final Report of the Survey and Settlement of the Kolhan Government Estate District of Singhbhum, Patna, 1920, p. 17.

[5] S.R. Tickell, Memoir on the Hodesum, The Journal of Asiatic Society of Bengal, Vol IX, Part II July to December, Bishop's College Press, Calcutta, 1840, p. 696.

[6] A.D. Tuckey, ICS, Assistant Settlement Office, Chota Nagpur, 1920.

[7] A.D. Tuckey, Final Report on the Resettlement of The Kolhan Government Estate in the District of Singhbhum, Patna, 1920, p. 17.

[8] S.R. Tickell, Memoir on the Hodesum, The Journal of Asiatic Society of Bengal, Vol IX, Part-II July to December, Bishop's College Press, Calcutta, 1840, p. 697.

[9] Samuel Richard Tickell, साउथ वेस्ट फ्रंटियर एजेंसी के पहले असिस्टेंट राजनीतिक एजेंट थे। 1837–40 के वर्षों में उन्होंने "Memoir of Hodesum" लिखा और हो भाषा का पहला व्याकरण तैयार किया, जो किसी भी झारखंडी आदिवासी भाषा का भी पहला व्याकरण था।

[10] S.R. Tickell, Memoir on the Hodesum, The Journal of Asiatic Society of Bengal, Vol IX, Part-II July to December, Bishop's College Press, Calcutta, 1840, p. 697.

[11] अपुष्ट इतिहास बताता है कि पोड़ाहाट राजाओं ने सिंहभूम के उत्तरी और दक्षिणी हिस्सों पर अपना नियंत्रण स्थापित कर रखा था । पोड़ाहाट राजवंश के साथ एक आपसी समझौते के तहत, हो लोगों ने अपनी उत्तरी बस्तियों को छोड़ दिया। वे धीरे–धीरे मध्य और दक्षिणी सिंहभूम में फैल गए और हो के रूप में एक विशिष्ट जातीय पहचान विकसित की। (Asoka Kumar Sen, The Making of a Village: The Dynamics of Adivasi Rural Life in india, Routledge Publication, 2021, pp. 76-77.)

[12] S.R. Tickell, Memoir on the Hodesum, The Journal of Asiatic Society of Bengal, Vol IX, Part II July to December, Bishop's College Press, Calcutta, 1840, p. 784.

[13] खूंटकट्टी– छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम मे खूंटकट्टी की परिभाषा गांव के मूल संस्थापको या पुरुष वंश में उनके वंशजों द्वारा जंगल से पुनः प्राप्त की गई भूमि को परिभाषित करती है, जो एक रैयत के पास होती है जा उस परिवार का सदस्य होता है जिसने मूल रूप से जंगल को साफ किया और गाँव की स्थापना की।

कोल्हान क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से पठारी क्षेत्र है। हो समाज के लोगों ने अपनी आवश्यकता के अनुसार इस क्षेत्र के खेतों को लहरदार बनाया और अधिकांश भाग में छोटी धाराओं के जाल बीछे। अधिकांश स्थानों पर गड्ढों को खोदकर और सीढ़ी बनाकर, उनके किनारों पर झरनों का उपयोग करके और उनके सिरों पर बांध बनाकर भूमि को धान की खेती के लिए तैयार किया जाता था। ऐसा करने के बाद, धान को तश्तरी के आकार के उथले गड्ढों के नीचे या किनारों पर उगाया जाता था। कुछ खेतों में एक निश्चित मात्रा में समतलीकरण कर पेड़ों को मेड़ों या ढलानों के किनारों से लगाया जाता था। इस प्रकार खेत लंबे चौड़े श्रृंखला में एक दूसरे से ऊपर बनाए जाते थे, लेकिन प्रत्येक चरण आम तौर पर चौड़ा होता है और वृद्धि बहुत धीरे–धीरे होती है, इसलिए इसे सीढ़ीदार व्यवस्था के रूप में ठीक से वर्णित नहीं किया जा सकता है, जैसे कि कुछ पहाड़ी जिलों में प्रचलित है। प्रत्येक भूखंड के चारों ओर पानी रोकने के लिए छोटे–छोटे तटबंध बनाए जाते थे और जैसे ही बारिश शुरू होती भूखंड में बाढ़ आ जाती थी और फसल पकने तक पानी जमा रहता था। खराब गुणवत्ता वाले धान की खेती ऊंचे स्थानों पर की जाती थी जो बिल्कुल भी समतल या तटबंधित नहीं होते थे और जो नमी के लिए केवल वर्षा पर निर्भर करते थे।[15] अतः कोल्हान की कृषि भूमि को तीन वर्गों में बांटा जाता है– बेड़ा, बादी और गोड़ा।

बेड़ा खेतः यह ढलानों की निचली भूमि होती है। इसमें आर्द्रता ग्रहण करने की क्षमता अधिक होती है। इस कारण बेड़ा में वर्ष भर नमी बनी रहती है। अतः इन खेतों में अधिक पानी की आवश्यकता वाले धान की किस्मों को उगाया जाता है। किसी वर्ष वर्षा कम होने पर भी बेड़ा खेतों पर धन लगाया जा सकता है क्योंकि सबसे शुष्क वर्ष में भी इन खेतों में नमी बनी रहती है।

बादी खेतः बादी मध्यम उर्वरता वाले खेत होते है, परंतु ऐसी भूमि से बेहतर फसल प्राप्त की जा सकती है। बादी धान की खेती के लिए भी अच्छे होते है। इनमें मध्य पानी की आवश्यकता वाले फसलों की किस्म को उगाया जाता है जैसे हल्का धन, तिसी, कंसारी, मूंग, सरसों आदि।

गोड़ा खेतः यह रेतीली मिट्टी वाली भूमि होती है। इन खेतों में कम समय में और कम पानी की आवश्यकता वाले धान की किस्मों को उगाया जाता है जैसी साठीये धान, यह धान की किस्म 60 दिन में तैयार हो जाती है। गांव का कोई भी व्यक्ति गोड़ा भूमि पर खेती कर सकता था। गोड़ा भूमि पर सामाजिक स्वामित्व की भावना काम करती थी।[16]

हो लोग सिंचाई के लिए मुख्य रूप से प्राकृतिक वर्षा पर निर्भर रहते थे, किंतु कोल्हान क्षेत्र में कुछ तालाब आवश्यं मौजूद थे जो की पूर्व निवासियों द्वारा बनाए गए थे इन तालाबों के विषय में हो लोगों द्वारा माना जाता है कि तालाबों का निर्माण सरक लोगों द्वारा किया गया था जो सिंहभूम के इस हिस्से के शुरुआती निवासी थे।[17] परंपरागत कृषि की झलक वर्तमान समय में भी देखने को मिलती है कृषि कार्यों में पुरूष हल जोतते और निराई करते थे, जबकि महिलाएँ निराई, रोपाई, कटाई, मढ़ाई का कार्य करती थी। कुछ गिने–चुने कार्य जो महिलाएं नहीं कर सकतीं, उनमें से एक था हल चलाना। हो महिलाओं को हल छूने की मनाही थी। यह नियम इतना सख्त था कि पुरूष हल को घर के अंदर नहीं लाते थे कि कहीं गलती से महिलाएं हल को छू ना लें। ऐसा विश्वास था कि महिलाओं के हल छूने से पूरे गाँव में सूखा जैसा दुर्भाग्य आ जाएगा।[18]

समान्यतः कोल्हान के खेतों में चार बार हल जोते जाते थे। पहला हल मार्च–अप्रैल में किया जाता था। पुरूष हल जोतते थे और महिलाएं हल के पीछे–पीछे मिट्टी के ढेलो को तोड़ती और घास साफ करती चलती थी। जुताई के समय महिलाएं खेत पर काम कर रहे लोगों के लिए भोजन बनाकर लाती थी। पुरूषों से अपेक्षा की जाती थी कि वे खेतों में तटबंध बनाने में मदद करे, सिंचाई और जल निकासी का ध्यान रखें। लेकिन अक्सर जब कोई पुरूष उपलब्ध नहीं होता तो महिलाएं ये काम भी स्वयं करती थी। दूसरी बार मई में पुरूष हल जोतते जाते थे और महिलाएं घास साफ करती जाती थी ताकि बचे हुए घास भी धूप से मर जाए। बुआई शुरू होने से पहले महिलाएं, पुरूषों की मदद के बिना, प्रत्येक घर के पास बने एक बड़े गड्ढे में साल भर एकत्र किए गए गोबर से खाद तैयार करती थी। महिलाओं द्वारा जैविक खाद सिर पर ढ़ोकर खोतो में पहुंचाया जाता था तथा अपने हाथों से खेतों में खाद छिड़कती थी। महिलाएं अपने सिर पर टोकरियों में गोबर की खाद लेकर घर और खेतो के बीच दर्जनों चक्कर लगाती थी। जून में मानसून की पहली बारिश के साथ खेतो में धान बो दिया जाता था, जिसमे महिलाएं खेतों तक धान को सर पर रख कर लाती थी तथा बोआई करती थी, तब तीसरी बार पुरूष हल जोतते ताकी धान मिट्टी से ढ़क जाये। जब धान के पौधे दो माह के हो जाते थे, तो अगस्त माह में कढ़ाई किया जाता था जिसमें पुनः हल जोता जाता था और महिलाएं इकट्ठे हुए धान के पौधो को अलग–अलग करके खेतों के खाली जगहों में रोप देती थी। साथ ही, जिन खेतों में रोपाई करनी होती थी उनमें भी महिलाएं रोपाई करती थी। दो माह के बाद जब धान के पौधों से फूल झड़ने लगते थे तो खेतो से मछलियां पकड़ी जाती थी। ये कार्य भी अधिकतर बच्चे और महिलाएं ही करती थी।

फसल पक जाने पर कटाई की जाती थी और फसल को बांधकर खलिहान ले जाते थे। फसल को महिलाएं अपने सिर पर ढ़ोकर खलिहान तक ले जाती थी। जबकि पुरूष अपने कंधो पर धान के फसल को ढोते थे। जिन परिवारो के पास बैलगाड़ी हाती थी, वे बैलगाड़ी से फसलों की ढूलाई करते थे। खलिहान में महिलाओं द्वारा मढ़ाई किया जाता था तथा बैलों के द्वारा भी मढ़ाई का कार्य किया जाता था। किन्तु महिलाओं को हाथ से मढ़ाई करना अधिक पसंद था, क्योंकि इस भूसे का उपयोग छप्परपोशी के लिए किया जा सकता था, जबकि जानवारों द्वारा मढ़ाई के बाद भूसे का उपयोग चारे के अलावा किसी भी चीज के लिए नहीं किया जा सकता था।

हो लोगों का मुख्य फसल धान था। हो परिवार साल में चावल की एक प्रमुख फसल उगाते थे, जिसे वे मॉनसून के दौरान बोते थे। इसके अलावा दलहन, मड़वा, गंगई, चना, खेसारी, राहर, गुदली, तिल, सरसों और साग सब्जी आदि की खेती की जाती थी।

[14] Sanjukta Das Gupta, Colonial Rule and Tribal Agriculture: The Kolhan Government Estate in Chota Nagpur, in Shireen Moosvi (ed.), Capitalism, Colonialism and Globalization — Studies in Economic Change, Delhi: Tulika, 2011, p. 56.

[15] L.SS. O'Malley, Bengal District Gazetteers, Singhbhum, Seraikela and Kharasawan, The Bengal District Book Depot, Calcutta, 1910, p. 113.

[16] J.A. Craven, Final Report on the Settlement of The Kolhan Government Estate, 1897, Calcutta, p. 30.

[17] Ibid. p. 25.

[18] Madhu Kishwar, 'Toiling without Rights: Ho Women of Singhbhum', Economic and Political Weekly, Vol. XXII, No 3, p. 196.

ब्रिटिश काल में हो कृषि अर्थव्यवस्था में परिवर्तन

सिंहभूम में, औपनिवेशिक काल (1837-1947) से जुड़ा सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन उन्नीसवीं सदी के अंत में स्थायी खेती का विस्तार था। वास्तव में, यह उन तरीकों में से एक था जिसके द्वारा औपनिवेशिक प्रशासन ने क्षेत्र के आदिवासियों पर अपना नियंत्रण मजबूत करने की कोशिश की थी। खेती के विस्तार ने ग्रामीण और जंगली दोनों इलाकों पर नियंत्रण के अंग्रेजो के दोहरे उद्देश्य को पूरा किया। यह ब्रिटिश सरकार के अधिकतम राजस्व वसूली के उद्देश्य के अनुरूप भी था।[19]

उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में, अंग्रेज जंगलों को ऐसी भूमि मानते थे जो मनुष्य की अपर्याप्त देखभाल के कारण प्राकृतिक अवस्था में चली गई थी। इसलिए भूमि का मूल्य, व्यवस्थित कृषि को बनाए रखने की क्षमता के अनुसार किया गया था। कोल्हान क्षेत्र से अधिक कर प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक था कि कृषि भूमि का विस्तार किया जाए और अधिक से अधिक हो आदिवासी लोगों को स्थाई कृषक बनाया जाए। जिसके लिए ब्रिटिश सरकार ने हो आदिवासी लोगों के वनों तक पहुंच को सीमित करने के लिए विभिन्न वन अधिनियम बनाएं ताकि हो आदिवासी लोगों की वनों पर निर्भरता को काम किया जा सके और उन्हें वनों से बाहर लाकर स्थाई कृषक बनाया जा सके। अंग्रेजों ने कोल्हान के वनों पर एकाधिकार स्थापित किया और वनों का व्यवसायीकरण किया ताकि उन्हें कर स्वरूप लाभ प्राप्त हो सके।[20]

ब्रिटिश सरकार ने बंजर भूमि को कृषि भूमि में परिवर्तित करने के प्रयासों को बढ़ावा दिया। इसके लिए सरकार ने हो लोगों को अपने गाँव की सीमा के भीतर बंजर भूमि के एक हिस्से को पुनः प्राप्त करके अपनी खेती बढ़ाने का अधिकार दिया। हालाँकि, ऐसा करने से पहले उन्हें मानकी और मुंडा से अनुमति लेना आवश्यक था। लेकिन किसी भी संरक्षित वन क्षेत्र के भीतर किसी भी बंजर भूमि को उपायुक्त की विशेष अनुमति के बिना साफ नहीं किया जा सकता था। हो लोगों को परित्यक्त जोत के निपटान के संबंध में भी अधिमान्य अधिकार थे। बंजर भूमि के संबंध में मुंडा को किसी अनिवासी रैयत के साथ निपटान करने की स्वतंत्रता नहीं थी, जब तक कि कोई निवासी रैयत उन्हें निर्धारित किराए पर लेने के लिए तैयार हो।[21]

J.A. Craven अपने सेटलमेंट रिपोर्ट में लिखते हैं कि कोल्हान की प्रमुख खाद्य फसल धान थी। किंतु अन्य अनाजों में सबसे महत्वपूर्ण मक्का या भारतीय मक्का थी, जो आमतौर पर घरों के पास ऊंची भूमि पर उगाया जाता था, साथ ही मड़वा (Eleusine Coracana) भी होता था। जौ काफी हद तक उगाया जाता था, लेकिन गेहूं केवल एक छोटे से क्षेत्र में उगाया जाता था, मुख्यतः चावल की फसल कटने के बाद उसी भूमि पर बोया जाता था। बाजरा की काफी विविधता की खेती की जाती थी। जैसे कि गुंदली (Panicum miliare) ऊपरी भूमि पर उगाई जाती थी। ज्वार या गंगई (Sorghum culgare) कांटेदार बाजरा जिसे बाजरा (Pennisetum typhoideum), कोदो और सावड़ा कहा जाता था, पहाड़ियों पर उगाई जाती थी। अधिक महत्वपूर्ण दालें थी चना, कुर्थी (क्वसपबीवे इपसिवतने), उरद (Phaseolus radiatus) और राहर (Cytisus cajan), मूंग, खेसारी, बरई, रोमका, मसूर और केरस कम मात्रा में उगाए जाते थे। धान की फसल कटने के बाद चना, खेसारी, मसूर और केराव धान की भूमि पर उगाए जाते थे और अन्य दालें ऊंची गोड़ा भूमि पर उगाई जाती थी।[22] प्रमुख तिलहन थे रापे और सरसों, तिल, अलसी, और सरगुजिया या सूरजमुखी। अलसी, बादी भूमि के साथ–साथ गोड़ा भूमि पर भी उगाई जाती थी और अन्य केवल गोड़ा भूमि पर उगाई जाती थी। तेल कुसुम वृक्ष (Schleichera trijuga) के बीज, महुआ के फल (Bassia latifolia) और करंज (Pongamia glabra) के बीज से भी प्राप्त होता था। पहले का उपयोग खाना पकाने में किया जाता था, अंतिम दो का उपयोग शरीर पर लगाने के लिए किया जाता था। हो कभी–कभी खाना पकाने में महुआ तेल का भी उपयोग करते थे।[23]

गन्ना केवल एक छोटे से क्षेत्र में उगाया जाता था और कोल्हान में यह दिकू निवासियों तक ही सीमित था। चुने गए खेत तालाबों और नदियों के पास स्थित होते थे, क्योंकि फसल को बार–बार सिंचाई की आवश्यकता होती थी। इसे फरवरी और मार्च के महीनों में कलमों से लगाया जाता है, और अगले दिसंबर और जनवरी में फसल तैयार हो जाती थी।[24]

कपास व्यावहारिक रूप से एकमात्र रेशे वाली फसल थी, जूट के अंतर्गत भूमि की मात्रा बहुत कम थी। तीन प्रकार की कपास उगाई जाती थी, अर्थात् बुरी कपास, रोतिया और लम्बुआ। पहले प्रकार की कपास एक वार्षिक फसल थी। जिसके बारे में कहा जाता था कि इसे हिंदू कृषकों द्वारा शुरू किया गया था। दूसरे प्रकार की कपास भारतीय मकई और अन्य अनाजों के साथ गोड़ा भूमि पर उगाया जाने वाला एक स्वदेशी वार्षिक पौधे थे। तीसरे प्रकार की कपास एक बारहमासी पौधा था, जो गोड़ा भूमि पर ही उगाया जाता था। 1907–08 में कपास का क्षेत्रफल 7,000 एकड़ था।[25]

बुरी कपास के नाम से जानी जाने वाली किस्म विशेष ध्यान देने की मांग करती थी। यह एक लाभदायक किस्म थी, जो मुख्य रूप से आदिवासियों द्वारा उगाई जाती थी, जो काफी अच्छी गुणवत्ता वाली कपास पैदा करते थे, ऐसा कहा जाता था कि यह यूरोपीय बाजार में तुरंत बिक जाती थी। इस किस्म के संबंध में कृषि निदेशक ने कृषि विभाग की 1906–07 की रिपोर्ट में लिखा था कि इस प्रांत में समय–समय पर कपास की कई किस्मों का परीक्षण किया गया था, जिनमें बड़ी संख्या में विदेशी किस्में–अमेरिकी, मिस्र और समुद्री द्वीप शामिल थे लेकिन अधिकांश मामलों में परिणाम बहुत असंतोषजनक रहे थे। 1905–06 में की गई पूछताछ से मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि यदि बंगाल में कपास की खेती में सुधार की दिशा में स्वदेशी या पहले से ही की जा रही कपास की खेती पर काम करना सबसे अच्छा होगा। अनुकूलित किस्में सिंहभूम और आसपास के कुछ जिलों में स्थानीय रूप से बुरी कपास के नाम से जाना जाने वाला कपास कुल मिलाकर सफलता का सबसे अच्छा वादा करती थी। यह कपास Gossypium hirsutum प्रजाति से संबंधित था और अमेरिकी मूल का था, हालांकि इसके परिचय का इतिहास ठीक से पता नहीं लगाया जा सका।[26]

1907–08 में तम्बाकू बहुत छोटे क्षेत्र में फैला था, लगभग 300 एकड़ में। यह आम तौर पर नदी भूमि पर और घरों के पास छोटे भूखंडों पर उगाया जाता था, जहां मिट्टी अच्छी तरह से खादयुक्त होती थी। इसे अक्टूबर में बीज–क्यारियों में बोया जाता था, दिसंबर में रोपाई की जाती थी, और मार्च में फसल एकत्र की जाती थी। दो प्रकार के तम्बाकू की खेती की जाती थी। एक के

[19] Sanjukta Das Gupta, "Colonial Rule and Agrarian Transition in Singhbhum"; R.S. Basu (eds.), Narratives from the Margins: Aspects of Adivasi History in India, New Delhi: Primus Books, 2012, pp. 158-159.

[20] Ibid.

[21] J.A. Craven, Final Report on the Settlement of the Kolhan Government Estate, 1897, Calcutta, p. 30.

[22] Ibid, p. 114.

[23] Ibid.

[24] Ibid.

[25] Ibid.

[26] Ibid, p. 115.

पास एक बड़े पत्ते होते थे और दूसरे में छोटे पत्ते होते थे, जो दूसरे के आकार का लगभग आधा था। यह फसल पूरी तरह से घरेलू उपभोग के लिए उगाई जाती थी।[27]

कर व्यवस्था

कोल्हान–पोड़ाहाट क्षेत्र की अर्थव्यवस्था पर अपनी पकड़ मजबूत बनाने के लिए ब्रिटिश सरकार ने सर्वप्रथम भूमि बंदोबस्त करना प्रारंभ किया और भूमि का लेखा–जोखा अपने पास रखा ताकि कर व्यवस्था को सुचारू रूप से लागू किया जा सके। पहला समझौता 1821 में 8 आने प्रति हल भूमि की दर पर किया गया था। जिसे हो लोगों ने मानने से अस्वीकार कर दिया, कोल्हान क्षेत्र में शुरुआत से ही कर की दरे बहुत कम रखी गई थी, कोल्हान क्षेत्र में बहुत अधिक कर वसूलना अंग्रेजों का उद्देश्य नहीं था अपितु अंग्रेज कोल्हान के आदिवासियों को अपने नियंत्रण में रखना चाहते थे। दूसरी ओर हो लोगों का मानना था कि हम किसी बाहरी लोगों को क्यों कर दें, चाहे रकम कितनी ही काम क्यों ना हो। हो लोग हमेशा से स्वतंत्र रहते आए थे उन्होंने स्वयं के ऊपर कभी भी किसी और के प्रभुत्व को स्वीकारा नहीं था। हो लोगों को समझा बूझाकर कर व्यवस्था को 1830 में पुनः लागू करने का प्रयत्न किया गया किंतु यह प्रयास भी विफल रहा। 1837 में 1821 की कर व्यवस्था को आधार बनाकर बंदोबस्त में आठ आने प्रति हल भूमि की दर को कायम रखा गया। यह 622 गांवों के लिए था। साथ ही, 5,108 रुपये की मांग की गई थी। कोल्हान के निवासी कृषकों के लिए बैलों की प्रत्येक जोड़ी एक हल होती थी और गैर–निवासियों के लिए भूमि का हल वह मात्रा मानी जाती थी जिस पर पाँच मन बीज बोया गया था। मुंडाओं द्वारा प्रतिवर्ष हलों की संख्या के अनुसार भुगतान किया जाता था और तदनुसार मूल्यांकन संशोधित किया जाता था। यह व्यवस्था 1854 तक जारी रही और फिर 1854 में किराया बढ़कर 8,523 रुपये किया गया। कैप्टन डेविस द्वारा एक रुपये प्रति हल पर बारह साल का समझौता किया गया। 786 गाँव बसाए गए और सकल किराया 23,266 रुपये, मानकियों और मुंडाओं के कमीशन में क्रमशः 10 प्रतिशत और 16 प्रतिशत की कटौती के बाद शुद्ध किराया 17,448 रुपये सरकार को प्राप्त होते थे।[28]

12 साल बाद अगला समझौता 1867 में डॉ. हेस द्वारा किया गया और जिसमें पहली बार भूमि को मापा गया। स्थानीय बीघे की सीमा 2,500 वर्ग गज तय की गई और 5 बीघे को एक हल के रूप में लिया गया, जिसका किराया बढ़ाकर 2 या 6 1/2 आने प्रति बीघे तक किया गया। यह मूल्यांकन केवल धान की भूमि पर किया गया था। हालाँकि, चार सबसे जंगली पीर, सारंडा, रेंगरा, लतुआ और रेला को मापा नहीं गया था और पुराने हल के आधार पर ही 2 रुपये प्रति हल तय किया गया था। 847 गाँव बसाए गए और सकल किराया 64,828–14–0 रुपये थे। मानकियों और मुंडाओं को क्रमशः 10 प्रतिशत और 16 प्रतिशत का कमीशन मिलता था और सकल किराये का 2 प्रतिशत कमीशन के साथ ग्राम अधिकारी, तहसीलदार या लेखाकार का एक नया वर्ग बनाया गया। शुद्ध किराया 46,247–6–5 रुपये था तथा समझौते की अवधि 30 वर्ष थी। भूमि को लाठी–डंडों से मापी की गयी और रैयतों का नाम, जमीन का रकबा और रीट दर्शाते हुए कच्चा चिट्ठा तैयार किया गया। इस बस्ती को स्थानीय तौर पर 'डंडा मूक' के नाम से जाना जाता था।[29]

30 साल बाद अगला समझौता 1897 में क्रेवेन द्वारा अप्रैल की पहली तारीख को लागू किया गया। इस भूमि बंदोबस्त में, हो लोगों और सभी दर्ज दिकू[30] लोगों की सभी धन उपजाने वाली भूमि को दर्ज किया गया और 6) आने प्रति बीघे का मूल्यांकन जारी रखा गया था। हालाँकि, धान की भूमि को दो वर्गों में विभाजित किया गया था। बेड़ा प्रथम श्रेणी और बदी द्वितीय श्रेणी के खेत थे। जबकि तीसरी श्रेणी में ऊपरी भूमि आते थे जिन्हें गोड़ा कहा जाता था। इस बंदोबस्त में पहली बार गोड़ा भूमि को कर प्राप्त करने के लिए मूल्यांकन किया गया था। हो और दर्ज दिकू के लिए प्रति एकड़ एक आना कर निर्धारण किया गया जबकि नए दिकू के लिए लगान इन दरों से दोगुनी दर पर निर्धारित किया गया था, धान की भूमि के लिए 13 आने प्रति बीघे और उपरी भूमि के लिए 2 आने प्रति बीघे। गैर–खेती करने वाले दिकू के घरों का मूल्यांकन एक रुपये प्रति बीघा में किया गया तथा कूली डिपो की भूमि को 2 रुपये प्रति बीघे में तय किया गया। मानकियों, मंडाओं और तहसीलदारों के कमीशन की मौजूदा दरें बरकरार रखी गईं। गणना के अनुसार प्राप्त सकल किराया 1,77,300–1–3 रुपये थे, ग्राम अधिकारियों का कमीशन 49,644–0–4 रुपये और शुद्ध किराया 1,27,656–0–11 रुपये थे। कोल्हान के भीतर 10 लखिराज गांवों के लगान का निपटान एक ही समय और समान दरों पर किया गया, और इसके तुरंत बाद तीन और गांवों का लगान तय किया गया। इस समझौते की अवधि 31 मार्च, 1917 तक 20 वर्ष थी। तब से इसे एक वर्ष के लिए बढ़ाकर 31 मार्च, 1918 कर दिया गया है। 1918 – 1919 का भूमि बंदोबस्त अंग्रेजों द्वारा किया गया अंतिम बंदोबस्त था।[31]

वनों को काटकर कृषि भूमि में वृद्धि ने भारत के कई अन्य हिस्सों की तरह विरोधाभासी रूप से कृषि संकट को जन्म दिया और अकाल जैसी समस्याएं उभर कर सामने आई। जिससे इस क्षेत्र के हो लोग कृषि कार्य के अलावा नवीन पेशों को अपनाने लगे।[32] शिक्षा ने नवीन पेशों के प्रति रुझान को बल दिया जिसके परिणाम स्वरुप कृषि क्षेत्र में एकाएक परिवर्तन आने लगे।

स्वाधीनोत्तर भारत में हो कृषि अर्थव्यवस्था

19 वीं सदी के उतरार्द्ध में कोल्हान में हो लोगों को शिक्षित करने का पहला प्रयास 1841 में किया गया था, जब चाईबासा में एक एंग्लो हिंदी स्कूल 'चाईबासा स्कूल' के नाम से स्थापित किया गया था।[33] यह मूल रूप से हो लड़कों को अंग्रेजी और हिन्दी की पढ़ाई के लिए थी, हालाँकि हो लड़कों के अलावा कोई भी लड़का इसमें शामिल हो सकता था। 1844 में, चाईबासा स्कूल में 8 कक्षाओं में छात्रों की संख्या 61 थी, जबकि 1845 में, वहाँ केवल 56 विद्यार्थी थे, जिनमें से 7 कोल थे। 1850 में आदिवासी छात्रों की संख्या में वृद्धि हुई थी।[34] 1868 में, स्कूल में 47 छात्र अंग्रेजी पढ़ते थे और 141 छात्र हिंदी पढ़ते थे।[35]

---

[27] Ibid, p. 116.

[28] A.D Tuckey, Final Report on the Resettlement of the Kolhan Government Estate in the District of Singhbhum; 1913-1918, Patna, 1920, p. 46.

[29] Ibid.

[30] दिकू– गैर आदिवासी लोगों को हो लोगों द्वारा दिकू कहकर संबोधित किया जाता है।

[31] Ibid.

[32] Sanjukta Das Gupta, "Colonial Rule and Agrarian Transition in Singhbhum"; R.S. Basu (eds.), Narratives from the Margins: Aspects of Adivasi History in India, New Delhi: Primus Books, 2012, pp. 158-159.

[33] J.A. Craven, Final Report on the Settlement of The Kolhan Government Estate, 1897, Calcutta, p. 23.

[34] Ibid.

[35] Sanjay Nath, 'Chaibasa School and Beyond: Educating the Hos of Kolhan Government Estate in Singhbhum (1841–68)', M.C. Behera (ed.), Tribe, Space and Mobilisation: Colonial Dynamics and Post-Colonial Dilemma in Tribal Studies, Springer, Singapore, 2022, pp. 292-293.

1900 तक, हो समाज के बागूनेश्वर जारिका कोल्हान इंस्पेक्टर के उच्च पद तक पहुंचे थे। लोअर डिवीजन क्लर्क के रूप में बिजय सिंह हो और महानाईक हो नौकरी प्राप्त कर सके। हालाँकि, हो समाज को चपरासी, दफादार, खलासी, स्वीपर आदि जैसी नौकरियों में कहीं अधिक संख्या में नियुक्त किया गया था।[36]

नई नौकरियां ने कोल्हान में मुद्रा अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाया। इससे आजीविका में क्रमशः परिवर्तन आए जिसके परिणामस्वरूप कोल्हान के हो लोगों के जीवन में सांस्कृतिक आर्थिक बदलाव आए। एक ओर परिवार का आर्थिक आधार विस्तृत और मजबूत बना है, तो दूसरी ओर शिक्षा प्राप्त आदिवासी समाज के दृष्टिकोण में बुनियादी परिवर्तन आए है। मुद्रा आर्थव्यवस्था के कारण मुद्रा ने आदिवासियों को आकर्षित किया और खर्च करने की अधिक क्षमता वाले पुरूषों को सामाजिक प्रतिष्ठा और मान्यता प्राप्त हुई। बाहरी उत्पादों और निर्मित वस्तुओं की अधिक से अधिक मांग थी जिसने कोल्हान को सस्ते निर्मित सामानों के लिए एक अच्छा बाज़ार बना दिया। आदिवासी, विशेष रूप से खनन मजदूर, अपनी कमाई विदेशी कपड़ों , शराब, इत्र, तेल, साबुन, सौंदर्य प्रसाधनों आदि पर खर्च करने लगे।[37]

नौकरियों के प्रति हो समाज का आकर्षण स्वाधीनोत्तर भारत में और परिपक्व होने लगा। इससे हो समाज के युवा शिक्षा प्राप्त कर नौकरियां करने को इच्छुक होने लगे तथा उनकी रुचि कृषि के प्रति उदासीन हो गई। कृषि कार्य का बोझ अधेड़ उम्र के समाज और बच्चों एवं महिलाओं पर पड़ने लगी जिसका दुष्प्रभाव कृषि में दिखने लगा और कृषि की उत्पादकता घटती गई। नौकरी प्राप्त वर्ग शहरों में बसना चाहता था जिससे चाईबासा जैसे शहरों के आसपास की सभी कृषि भूमियों पर मकान बनने लगे जो की नौकरी पेशे वाले हो लोगों द्वारा खरीदा या बनाया गया। कालांतर में इन्हीं नौकरी पैसे वाले लोगों की सोच में बदलाव आया तथा इन्होंने नौकरी के साथ–साथ कृषि कार्य करने का बीड़ा उठाया। यह वर्ग स्वयं अपने गांव में जाकर कृषि ना करके अपने रिश्तेदारों के द्वारा कृषि करवाने लगे जिन्हें वे नकद सहयोग राशि भी देने लगे या अपनी भूमि को कृषि कार्य के लिए ठेके पर भी देने लगे। अब शिक्षित वर्ग अपने खेतों में रासायनिक खादो का प्रयोग भी करने लगे जिससे उनकी उत्पादक क्षमता बढ़ने लगी। इससे गांव में मौजूद कृषकों द्वारा कृषि के प्रति प्रेम और श्रम दिखने लगा। इससे कृषि की स्थिति थोड़ी बेहतर हुई।

इसके अलावा हमें हो समाज में एक और नौकरीपेशा वर्ग देखने को मिलता है जो नौकरी कार्यों के दबाव को ना झेल पाने के कारण नौकरियों को छोड़ पुनः अपनी परंपरागत कृषि व्यवस्था को अपनाने लगे। नौकरी और कृषि में हो समाज ने एक विशेष अंतर पाया कि नौकरी के तहत उन्हें किसी के अंतर्गत कार्य करना पड़ रहा था जबकि कृषि में वह स्वतंत्र कार्य कर रहे थे। ऐसे ही एक स्वतंत्र युवा सामाजिक कार्यकर्ता गुरुचरण समद जी है जिन्होंने अपनी इंजीनियर की नौकरी को छोड़कर आदिबिम्ब NGO स्थापित की, जिसके तहत वे गरीब हो किसानों की मदद करते हैं। उन्हें खेती के आधुनिक उपकरण मुहैया कराते हैं तथा खेती से संबंधित सरकारी योजनाओं को गरीब किसानों तक पहुंचाते हैं ताकि उन्हें लाभ प्राप्त हो सके। सरकारी प्रयासों के द्वारा भी कृषि की उन्नति हुई।

निष्कर्ष

सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से हो आदिवासी कृषि, कोल्हान की कठिन परिस्थितियों और मौसम की अनियमितता के बावजूद भी इस क्षेत्र की जनसंख्या का पेट भरने में सक्षम थी तथा हो कृषि व्यवस्था में उत्पादन और उपभोग की मूल इकाई परिवार थी। एक परिवार और किली (वंश) के सभी सदस्य मिलकर कृषि कार्यों में सहयोग करते थे। हो समाज अपने सामूहिक सांप्रदायिक संस्कृति के लिए जाने जाते थे। अंग्रेजों द्वारा कृषि और वन्य क्षेत्र में लाये गए बदलावों के फलस्वरुप हो समाज की सामूहिक सांप्रदायिक भावना आहत हुई और लोगों में एकल परिवार की भावना बढ़ने लगी। अंग्रेजों का कृषि क्षेत्र में बढ़ते दबाव के कारण हो लोग आजीविका के नए पेशों को अपनाने लगे। जिससे कृषि में गिरावट आई किंतु कालांतर में हो समाज ने अपने विशिष्ट प्राकृतिक सतत् कृषि प्रणाली के महत्व को समझा और इसे संरक्षित किया। कोल्हान क्षेत्र में कृषि से जुड़ी स्थानीय परंपरागत ज्ञान प्रणाली आज भी विकसित है, जो इस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों की संरक्षण और टिकाऊ उपयोग के माध्यम से प्राकृतिक पर्यावरण के प्रबंधन के मुद्दे को संबोधित करती है।

References

1. Areeparampil M. Struggle for Swaraj, TRTC, Chaibasa; c2002.
2. Craven JA. Final Report on the Settlement of the Kolhan Government Estate, 1897, Calcutta; c1898.
3. Gupta Sanjukta Das. Adivasis and the Raj: Socio-economic Transition of the Hos: 1820-32, Orient Blackswan. New Delhi; c2011.
4. O'Malley LSS. Bengal District Gazetteers, Singhbhum, Seraikela and Kharasawan, The Bengal District Book Depot, Calcutta; c1910.
5. Paty CK. Forest, Government, Tribe, Concept Publishing Company, New Delhi; c2006.
6. Roy Choudhary PC. Bihar District Gazetteers, Singhbhum, Superintendent Secretariat Press, Patna; c1958.
7. Sahu M. The Kolhan under the British Rule, No publisher, Calcutta; c1970.
8. Sen AK. Representing Tribe: The Ho of Singhbhum during Colonial Rule, Concept Publishing Company, New Delhi; c2011.
9. Sen AK. From Village Elder to British Judge: Custom, Customary Law and Tribal Society, Orient Blackswan. New Delhi; c2012.
10. Sen AK. Indigeneity, Landscape and History: Adivasi Self-fashioning in India, Routledge, London and New York; c2018.
11. Sen AK. Singhbhum: Some Historical Gleanings, Chaibasa; c1986.
12. Singh CP. The Ho Tribe of Singhbhum, Classical Publications, New Delhi; c1978.
13. Tickell SR. Memoirs on the Hodesum, The Journal of Asiatic Society of Bengal, Vol IX, Part II July to December, Bishop's College Press, Calcullta; c1840.
14. Tuckey AD. Final Report on the Resettlement of the Kolhan Government Estate in the District of Singhbhum, 1913-1918, Superintendent Government Printing Press, Bihar and Orissa, Patna; c1920.

[36] Ibid, p. 289.

[37] M. Sahu, The Kolhan under the British Rule, The New Diamond Press, Calcutta, 1985, p. 250.